जैन
पथप्रदर्शक
ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)
नैतिक एवं सामाजिक चेतना का अग्रदूत निष्पक्ष पाक्षिक

दान निर्लोभियों की क्रिया थी, जिसे यश और पैसे के लोभियों ने विकृत कर दिया।

ह्न बिन्दु में सिन्धु, पृष्ठ-30

वर्ष : 27, अंक : 4 | **सम्पादक :** पण्डित रतनचन्द भारिल्ल | आजीवन शुल्क : 251 रुपये
मई (द्वितीय) 2004 | **प्रबन्ध सम्पादक :** पं. संजीवकुमार गोधा व पं. जितेन्द्र वि. राठी | वार्षिक शुल्क : 25 रुपये, एकप्रति : 2/-

पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव सानन्द सम्पन्न

कोटा (राज.) : श्री दिग. जैन मुमुक्षु मण्डल के तत्त्वावधान में श्री कुन्दकुन्द शिक्षण केन्द्र ट्रस्ट कोटा द्वारा आयोजित श्री नेमिनाथ दिगम्बर जिनबिम्ब पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव सोमवार, दिनांक 3 मई से रविवार, दिनांक 9 मई, 2004 तक अनेक कार्यक्रमों सहित सानन्द सम्पन्न हुआ।

महोत्सव में अध्यात्म जगत के शिरोमणि विद्वान बाबू जुगलकिशोरजी 'युगल' के प्रवचनसार की 90 वीं गाथा पर मार्मिक प्रवचन तथा अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त तार्किक विद्वान डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल केप्रात: प्रवचनसार पर एवं रात्रि में पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव पर सारगर्भित प्रवचन हुये। इसके अतिरिक्त पण्डित विमलचन्दजी झांझरी उज्जैन, पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल जयपुर, डॉ. उत्तमचन्दजी जैन सिवनी, पण्डित वीरेन्द्रकुमारजी आगरा, पण्डित प्रदीपकुमारजी झांझरी उज्जैन, ब्र.कैलाशचन्दजी 'अचल' ललितपुर, पण्डित देवेन्द्रकुमारजी बिजौलिया आदि के प्रवचनों का लाभ भी मिला।

पंचकल्याणक की सम्पूर्ण प्रतिष्ठा विधि प्रतिष्ठाचार्य बाल ब्र. अभिनन्दनकुमारजी शास्त्री खनियांधाना द्वारा सह-प्रतिष्ठाचार्य पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री छिन्दवाड़ा, पण्डित राजकुमारजी शास्त्री बांसवाड़ा, पण्डित मनीषजी शास्त्री पिड़ावा, पण्डित संजयजी हरसौरा, पण्डित रतनचन्दजी शास्त्री कोटा, पण्डित ऋषभजी शास्त्री छिन्दवाड़ा, पण्डित अनिलजी 'धवल' कानपुर, पण्डित चेतनजी शास्त्री कोटा, पण्डित सुकुमालजी झांझरी उज्जैन, पण्डित नागेशजी पिड़ावा, पण्डित निकलंकजी शास्त्री एवं पण्डित दीपकजी के सहयोग से सम्पन्न कराई गई ।

सम्पूर्ण कार्यक्रमों का निर्देशन बाल ब्र. जतीशचन्दजी शास्त्री, सनावद ने किया।

महोत्सव में नेमिकुमार के माता-पिता बनने का सौभाग्य श्रीमती सुलोचना-जिनेश्वरदासजी मोदी को मिला।

सौधर्म इन्द्र-इन्द्राणी श्री ज्ञानचन्दजी-सुमन जैन तथा यज्ञनायक श्री वीरेन्द्रकुमार-सौ. कनकमाला हरसौरा, कोटा थे।

दिनांक 3 मई को महापौर नगरनिगम तथा हरिकुमार औदिच्य (पूर्व शिक्षा मंत्री) ने नेमिनाथ द्वार का उद्घाटन किया। झण्डारोहण श्री पूनमचन्दजी नरेशजी लुहाड़िया परिवार, मुम्बई ने किया। प्रतिष्ठामण्डप का उद्घाटन श्री ताराचन्द अशोककुमारजी सौगाणी, जयपुर तथा प्रतिष्ठा मंच का उद्घाटन श्री राजकुमार दिनेशकुमार महेशकुमार परिवार, कोटा द्वारा किया गया ।

इसी दिन श्री कैलाशचन्द रमेशचन्दजी झालावाड़ परिवार की ओर से पंचपरमेष्ठी विधान का आयोजन किया गया।

जन्मकल्याणक की शोभायात्रा को कोटा क्षेत्र के विधायक श्री ओम बिड़ला ने हरि झण्डी दिखाकर रवाना किया। रात्र में मैनपुरी से आया विशेष पालना लोगों के आकर्षण का केन्द्र रहा।

तपकल्याणक के अवसर पर दीक्षावन में बाबू जुगलकिशोरजी का वैराग्योत्पादक प्रवचन हुआ।

दिनांक 9 मई को जिनमंदिर का उद्घाटन श्री मोतीचन्दजी लुहाड़िया परिवार, जोधपुर ने किया। मूलनायक श्री सीमंधरस्वामी की प्रतिमा श्री निमेशभाई केतनभाई अनंतभाई सेठ परिवार मुम्बई, विधिनायक श्री नेमिनाथ भगवान की प्रतिमा श्री हर्षवर्धन चिदेश जैन औरंगाबाद तथा शासन नायक भगवान महावीरस्वामी की प्रतिमा श्री महेन्द्रकुमार अनिमेषकुमार अभिषेककुमार परिवार कोटा द्वारा विराजमान की गईं।

आचार्य कुन्दकुन्द के चरण बाबू जुगलकिशोरजी परिवार, कोटा ने स्थापित किये। साथ ही पंचपरमागम भी विराजमान किये गये।

गगनचुम्बी शिखर पर कलशारोहण करने का सौभाग्य श्री चंदालालजी जैथल को मिला।

महोत्सव में देश के कोने-कोने से लगभग 2 हजार लोग पधारे। स्थानीय लोगों को मिलाकर लगभग 7-8 हजार लोगों ने धर्मलाभ लिया।

इस अवसर पर पण्डित टोडरमल स्मारक

(शेष पृष्ठ - 4 पर .....)

अहिंसा चैनल पर डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल के प्रवचन प्रतिदिन प्रात: 7 बजे से अवश्य सुनें।

अहिंसा चैनल आपके यहाँ न आता हो तो (011) 51598351, 51598353, 9810371078 नं. पर संपर्क करें।

सम्पादकीय –

पञ्चास्तिकाय परिशीलन

8

ह्न रतनचन्द भारिल्ल

गाथा ९

दवियदि गच्छदि ताइं ताइं सब्भावपज्जयाइं जं।
दवियं तं भण्णंते अणण्णभूदं तु सत्तादो ।।९।।

(हरिगीत)

जो द्रवित हो अर प्राप्त हो सद्भाव पर्ययरूप में।
अनन्य सत्ता से सदा ही वस्तुत: वह द्रव्य है।।

इस गाथा में आचार्य कुन्दकुन्द द्रव्य का स्वरूप बताते हुए कहते हैं कि ह्न 'उन उन सद्भाव पर्यायों को जो द्रवित होता है, प्राप्त होता है, उसे द्रव्य कहते हैं, जो कि सत्ता से अनन्य है।'

आचार्य अमृतचन्द्र टीका में कहते हैं कि 'यहाँ सत्ता को और द्रव्य को अनन्यभूत कहकर अर्थान्तरपना होने का खण्डन किया है; भिन्न पदार्थपने का खण्डन किया है।'

यहाँ ध्यान देने की बात यह है कि यद्यपि सत्ता से द्रव्य भिन्न नहीं है, परन्तु कथंचित् सत्ता व द्रव्य अन्य-अन्य हैं, जैसा कि आगे की टीका से स्पष्ट है। वहाँ कहा है कि 'सामान्यरूप से स्वरूप से व्याप्त होता है तथा उन-उन क्रमभावी और सहभावी सद्भाव पर्यायों को अर्थात् स्वभाव विशेषों को जो द्रवित होता है ह्न प्राप्त होता है, वह द्रव्य है।

इसप्रकार अनुगत अर्थवाली निरुक्ति से द्रव्य की व्याख्या की गई। अनुगत अर्थ अर्थात् धातु का अनुसरण करते हुए, मिलते हुए अर्थवाली निरुक्ति से व्याख्या की गई है।

अन्यपना को स्पष्ट करते हुए कहा है कि ह्न 'यद्यपि लक्ष्य-लक्षण भावादि द्वारा द्रव्य को सत्ता से कथंचित् भेद है, अन्यपना है तथापि वस्तुत: परमार्थत: द्रव्य सत्ता से अपृथक् ही है।

इसलिए पहले आठवीं गाथा में सत्ता को जो सत्पना-असत्पना, त्रिलक्षणपना-अत्रिलक्षणपना, एकपना-अनेकपना सर्व पदार्थ स्थितपना-एकपदार्थ स्थितपना, विश्वरूपपना-एकरूपपना, अनन्तपर्यायमयपना-एकपर्यायमयपना कहा गया है, वह सब सत्ता से अर्थान्तरभूत अर्थात् अभिन्न अनन्य द्रव्य को देखने के लिए कहा है; इसलिए इनमें कोई ऐसी सत्ताविशेष शेष नहीं रहती जो कि सत्ता को वस्तुत: द्रव्य से पृथक् स्थापित करे।

जयसेनाचार्य की टीका में भी अमृतचन्द्राचार्य की भांति ही द्रवति गच्छति का एक अर्थ तो द्रवित होता है अर्थात् प्राप्त होता है ऐसा ही किया है; परन्तु तदुपरान्त दूसरा अर्थ ऐसा भी किया है कि 'द्रवति' अर्थात् स्वभाव पर्यायों को द्रवित होता है और गच्छति अर्थात् विभावपर्यायों को प्राप्त होता है। यद्यपि इस कथन से मूल अर्थ में कोई सैद्धान्तिक फर्क नहीं पड़ता; परन्तु उसी सामान्य कथन का विशेष स्पष्टीकरण किया है।

इस गाथा के स्पष्टीकरण में गुरुदेव श्री कानजी स्वामी द्रव्य के व्युत्पत्तिपरक अर्थ की ओर ध्यान आकर्षित करते हुए पर्याय की स्वतंत्रता बताकर पाठकों को स्वरूपसन्मुख होने की प्रेरणा देते हैं। वे कहते हैं ''पर्याय किसी निमित्त के कारण नहीं होती; किन्तु द्रव्य स्वयं ही अपनी पर्यायरूप द्रवित होता है। सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र की पर्याय को कौन द्रवित करता है ? द्रव्य स्वयं ही उन पर्यायों को द्रवित होता है। अत: सम्यग्दर्शन प्रगट करनेवालों को मात्र द्रव्य सम्मुख देखना ही रहा; द्रव्य और पर्याय में कुछ करना-धरना तो है ही नहीं।

निगोद का जीवद्रव्य अपनी तत्समय की योग्यता से स्वयं ही अपनी विभाव पर्यायों को प्राप्त होता है। सिद्ध की पर्यायरूप भी उनका द्रव्य स्वयं परिणमित होता है, किसी निमित्त के कारण वे पर्यायें द्रवित नहीं होतीं। स्वभावपर्यायरूप परिणमे या विभावपर्यायरूप परिणमे, उसरूप द्रव्य ही परिणमित होता है। किसी पर के कारण पर्याय परिणमित नहीं होती।''

गुरुदेव आगे कहते हैं कि 'द्रव्य की सत्ता स्व से अस्तिरूप और पर से नास्तिरूप है। सामान्यरूप से सब सत् होने पर भी प्रत्येक की विशेषसत्ता भिन्न-भिन्न है। सभी द्रव्य सत् होने पर भी कोई परमानन्दमय है, कोई दु:खी है, कोई जड़ है, कोई चेतन है, कोई अल्पज्ञ है तो कोई सर्वज्ञ है ह्न इसप्रकार प्रत्येक की अवान्तर सत्ता भिन्न-भिन्न है; परन्तु ये सब महासत्ता में समा जाते हैं। सत्ता का यथार्थ स्वरूप श्रद्धापूर्वक जाननेवाले को सम्यग्ज्ञान होकर केवलज्ञान हुए बिना नहीं रहता।''

तात्पर्य यह है कि जिसने ऐसा निर्णय किया कि ह्न 'अपने में जो भी किसी के प्रति राग-द्वेष की पर्याय उत्पन्न होती है, अपने में सुख-दुख की पर्याय उत्पन्न होती है, वह अपनी पर्यायगत योग्यता के सत्स्वभाव के कारण हुई; अनुकूल-प्रतिकूल परद्रव्य के कारण नहीं हुई।' ह्न ऐसी श्रद्धावाला मात्र ज्ञाता रह जाता है; उसे पर के प्रति राग-द्वेष नहीं होते। अस्थिरता का जो अल्प राग-द्वेष होता है, वह अनन्त संसार का कारण नहीं बनता। धीरे-धीरे अस्थिरता का राग-द्वेष भी कृश होते-होते नष्ट हो जाता है।

यद्यपि यहाँ महासत्ता-अवान्तरसत्ता की व्याख्या करके ज्ञान प्रधानता की बात ही की है; पूरे ग्रन्थ में ज्ञानप्रधान ही कथन अधिक है; परन्तु वस्तुस्वरूप की यथार्थ श्रद्धा एवं सम्यग्ज्ञान से आंशिक चारित्र भी आ ही जाता है। आचार्य अमृतचन्द्रदेव ने एवं गुरुदेवश्री ने भी अपने स्पष्टीकरण में श्रद्धा और चारित्र की चर्चा करके अध्यात्म की गहराइयों में पहुँचाने का पूरा-पूरा प्रयत्न किया है। गुरुदेव कहते हैं

कि चारित्र की पूर्णता में भले ही थोड़ी देर हो, पर अनन्त संसार नहीं रहता। ऐसे वस्तुस्वरूप के ज्ञाता अल्पकाल में ही मुक्त हो जाते हैं। ●

गाथा १०

दव्वं सल्लक्खणियं उप्पादव्वयधुवत्तसंजुत्तं।
गुणपज्जयासयं वा जं तं भणणंति सव्वगहू ।।१०।।

(हरिगीत)

सद् द्रव्य का लक्षण कहा उत्पाद व्यय ध्रुव रूप वह।
वही आश्रय कहा है जिन गुणों अर पर्याय का।।

इस गाथा में आचार्य कुन्दकुन्ददेव ने द्रव्य का लक्षण तीनप्रकार से किया है। वे कहते हैं कि ह्न १. जो सत् लक्षण वाला है, २. जो उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य संयुक्त है और ३. जो गुण-पर्यायों का आश्रयभूत है, उसे सर्वज्ञदेव कहते हैं।

आचार्य अमृतचन्द्र टीका में स्पष्टीकरण करते हुए कहते हैं कि ह्न सत्ता से द्रव्य अभिन्न होने के कारण सत् स्वरूप ही द्रव्य का लक्षण है, परन्तु अनेकान्तात्मक द्रव्य का 'सत्' मात्र ही स्वरूप नहीं है कि जिससे लक्ष्य-लक्षण के विभाग का अभाव हो। लक्ष्य-लक्षण का विभाग भी है।

यद्यपि सत्ता से द्रव्य अभिन्न है, इसलिए द्रव्य का जो सत्तारूप स्वरूप है, वही द्रव्य का लक्षण है। तथापि अनेकान्तात्मक द्रव्य के अनन्तस्वरूप हैं, उनमें से सत्ता भी उसका एक स्वरूप है, इसलिए अनन्त स्वरूपवाला द्रव्य लक्ष्य है और उसका सत्ता नाम का स्वरूप लक्षण है। ऐसा लक्ष्य-लक्षण विभाग घटित हो जाता है।

द्रव्य के **उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य** स्वरूप दूसरे लक्षण में जो द्रव्य में क्रमभावी भावों का प्रवाह है, वह द्रव्य की एक जातिपने को खण्डित नहीं करता अर्थात् जाति अपेक्षा द्रव्य में सदैव एकत्व ही रहता है। उत्पाद-व्यय होते हुए भी द्रव्य का ध्रौव्यपना कायम रहता है। वे तीनों सामान्य कथन से अभिन्न ही हैं।

'गुण-पर्याय' द्रव्य का तीसरा लक्षण है ह्न ऐसा जो कहा है। इस लक्षण में अनेकान्तात्मक वस्तु के अन्वयी विशेष गुण हैं और व्यतिरेकी विशेष पर्यायें हैं। अन्वयी अर्थात् एकरूप, सदृशता। गुणों में सदैव एकरूपता ही रहती है, इसलिए उनमें सदैव अन्वय है तथा व्यतिरेक अर्थात् भेद, एक का दूसरे रूप न होना। एक पर्याय दूसरे रूप न होने से पर्यायों में परस्पर व्यतिरेक है; इसलिए पर्यायें द्रव्य के व्यतिरेकी विशेष हैं; इसप्रकार एक ही साथ रहनेवाले गुण एवं क्रमश: प्रवर्तनेवाली पर्यायें द्रव्य से कथंचित् भिन्न एवं कथंचित् अभिन्न हैं तथा स्वभावभूत हैं; अत: द्रव्य के लक्षण हैं।

द्रव्य के इन उपर्युक्त तीनों लक्षणों से एक का कथन करने पर शेष दोनों बिना कथन किए अर्थ से ही आ जाते हैं। यदि द्रव्य सत् हो तो वह उत्पाद-व्यय-ध्रौव्यवाला और गुण-पर्यायवाला होगा ही। यदि वह उत्पाद-व्यय-ध्रौव्यवाला हो तो वह सत् और गुण-पर्यायवाला भी होगा ही और यदि गुण-पर्यायवाला हो तो वह सत् एवं उत्पाद-व्यय-ध्रौव्यवाला भी होगा ही।

इसप्रकार सत् नित्यानित्यस्वभाववाला होने से ध्रौव्य को और उत्पाद-व्ययात्मकता को प्रगट करता है तथा ध्रौव्यात्मक गुणों और उत्पाद-व्ययात्मक पर्यायों के साथ एकत्व दर्शाता है।

उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य नित्यानित्यात्मक स्वरूप पारमार्थिक सत् को बतलाते हैं। उत्पाद-व्यय अनित्यता को और ध्रौव्य नित्यता को बतलाता है। इसप्रकार 'द्रव्य उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य' लक्षणवाला है ह्न ऐसा कहने से 'वह सत् है' ह्न ऐसा बिना कहे ही आ जाता है तथा अपने स्वरूप की प्राप्ति के कारणभूत गुण-पर्यायों को प्रगट करते हैं।

इसीप्रकार गुण-पर्यायें अन्वय व व्यतिरेकवाले होने से ध्रौव्य को और उत्पाद-व्यय को सूचित करते हैं एवं नित्यानित्यस्वभाववाले पारमार्थिक सत् को बतलाते हैं।

इस गाथा पर विस्तार से प्रवचन करते हुए गुरुदेवश्री कानजी स्वामी सारांश रूप से कहते हैं कि ह्न ''द्रव्य और गुण-पर्याय में सर्वथा भेद नहीं है और सर्वथा अभेद भी नहीं है। यदि सर्वथा भेद होवे तो गुण और पर्याय अन्य के हो जाएँ और सर्वथा अभेद होवे तो गुण ही द्रव्य हो जाए अथवा पर्याय ही द्रव्य हो जाए; परन्तु ऐसा नहीं है।

प्रश्न ह्न वस्तु तो त्रिकाल है और वह स्वतंत्र है, वस्तु पराधीन नहीं है; परन्तु उसकी पर्यायें पराधीन हैं और वे पर के कारण होती हैं ह्न यह माने तो इसमें क्या दोष है ?

उत्तर ह्न एक सत् लक्षण में उत्पाद-व्यय-ध्रुव और गुण-पर्याय दोनों लक्षण गर्भित हैं। इसप्रकार एक लक्षण में तीनों लक्षण समा जाते हैं; क्योंकि जो 'सत्' है वह नित्य और अनित्यस्वरूप है। नित्यस्वभाव में ध्रुवता और अनित्यस्वभाव में उत्पाद-व्यय आ जाते हैं और इसप्रकार सत् का लक्षण उत्पाद-व्यय-ध्रुव कहा जाए तो उसमें गुण-पर्याय लक्षण भी आ जाता है। गुण कहने पर ध्रुवता और पर्याय कहने पर उत्पाद-व्यय आ जाते हैं। इसप्रकार उत्पाद-व्यय-ध्रुव लक्षण कहने से सत् लक्षण और गुण-पर्याय लक्षण भी आता है; और गुण-पर्याय लक्षण कहने से सत् लक्षण आता है और उत्पाद-व्यय-ध्रुव लक्षण भी आता है; क्योंकि द्रव्य नित्यानित्य है और उत्पाद-व्यय-ध्रुव लक्षण भी आता है; क्योंकि द्रव्य नित्यानित्य है। लक्षण भी नित्य-अनित्यस्वरूप को सूचित करता है।

इसप्रकार इन तीनों लक्षणों में सामान्य-विशेषता से भेद है; परन्तु वास्तव में वस्तु भेद नहीं है।'' ●

गुरुदेव जयन्ती पर अनेक कार्यक्रम

1.गुना (म.प्र.) : यहाँ गुरुदेवश्री कानजीस्वामी की जन्मजयन्ती पर दिनांक 21 अप्रेल को श्री महावीर जिनालय में पण्डित राजकुमारजी शास्त्री के प्रवचन के पश्चात् पण्डित बाबूलालजी पल्लीवाल की अध्यक्षता में श्रद्धांजलि सभा आयोजित हुई; जिसमें विद्वानों के अतिरिक्त मुमुक्षु भाई-बहिनों ने भी अपनी भावांजलि प्रस्तुत की। दोपहर में वीतराग-विज्ञान भवन में कम्प्यूटर पर स्वामीजी का समग्र जीवन दिखाया गया। रात्रि में जिनेन्द्र भक्ति के बाद राजकुमारजी का प्रवचन तथा उन्हीं की अध्यक्षता में पुन: श्रद्धांजलि सभा का आयोजन हुआ।

इसी अवसर पर '**वर्तमान युग में आध्यात्मिक क्रांति के प्रणेता श्री कानजीस्वामी**' विषय पर एक निबन्ध प्रतियोगिता का आयोजन हुआ; जिसमें निबन्ध प्रस्तुत करनेवाले 15 महानुभावों को पुरस्कृत किया गया।

22 अप्रैल को इसीतरह दैनिक कार्यक्रमों के अतिरिक्त रात्रि में पण्डित अनिलजी शास्त्री के प्रवचन के बाद श्री मथुराप्रसादजी की अध्यक्षता में स्वामीजी के जीवन पर प्रश्नमंच का आयोजन हुआ। **– बाबूलाल बांझल**

2.ग्वालियर (म.प्र.) : यहाँ आध्यात्मिक सत्पुरुष श्री कानजीस्वामी की जन्मजयन्ती के अवसर पर दिनांक 21 अप्रेल से 24 अप्रेल, 2004 तक तीन लोक मण्डल विधान का आयोजन किया गया।

इस अवसर पर 21 अप्रेल को प्रात: जिनेन्द्र शोभायात्रा एवं रात्रि में गुरुदेवश्री के जीवन पर विचार गोष्ठी का आयोजन किया गया।

विधि-विधान के सम्पूर्ण कार्य पण्डित प्रयंकजी शास्त्री, पण्डित ज्ञायकजी शास्त्री एवं पण्डित सुनीलजी बेलोकर द्वारा सम्पन्न कराये गये।

प्रतिदिन प्रात: पूजन-विधान के अतिरिक्त तीनों समय विद्वानों के प्रवचनों का लाभ मिला। रात्रि में प्रवचनोपरान्त ज्ञानवर्धक सांस्कृतिक कार्यक्रम कराये गये। **– शीतलप्रसाद जैन**

3.कानपुर (उ.प्र.) : यहाँ श्री दिग. जैनाचार्य कुन्दकुन्द स्मारक ट्रस्ट के तत्त्वावधान में **पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी और उनका जीवन दर्शन** विषय पर एक विचार गोष्ठी का आयोजन किया गया। गोष्ठी की अध्यक्षता श्री बहादुर जैन ने की। मुख्यवक्ता श्री राजूभाई के अतिरिक्त श्री आलोकजी जैन तथा श्री केशवजी जैन ने भी अपने विचार व्यक्त किये।

इसी अवसर पर वीतराग-विज्ञान पाठशाला के बच्चों ने गुरुदेवश्री की विभिन्न मुद्राओं को प्रस्तुत कर सभी का मन मोह लिया। सभी कार्यक्रम पण्डित अनिलजी 'धवल', भोपाल के कुशल निर्देशन में सम्पन्न हुये।

ज्ञातव्य है कि अक्षय तृतीया के दिन भी **दानतीर्थ की गौरवशाली परम्परा और अक्षय तृतीया** विषय पर गोष्ठी का आयोजन किया गया। अध्यक्षता दीपशिखाजी ने की।

4. कोलकाता : यहाँ श्री दिग. जैन मंदिर भवानीपुर (पद्दोपुकुर) में 21 से 24 अप्रेल तक प्रात: पूजन एवं गुरुदेवश्री के सी.डी. प्रवचन के अतिरिक्त पण्डित अनिलजी शास्त्री, भिण्ड के समयसार पर मार्मिक प्रवचनों का लाभ मिला। रात्रि में तीनों दिन आपके प्रवचन नयामंदिर में हुये।

विद्वत् परिषद का अधिवेशन सानन्द सम्पन्न

नई दिल्ली : वसंत कुंज में आयोजित पंचकल्याणक के शुभ अवसर पर श्री अखिल भा. दिगम्बर जैन विद्वत्परिषद् का 20 वाँ राष्ट्रीय अधिवेशन डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल की अध्यक्षता में सानन्द सम्पन्न हुआ। अधिवेशन में लगभग 60 विद्वानों की उपस्थिति रही। एक दिन पूर्व कार्यकारिणी की बैठक रखी गई, जिसमें अनेक ज्वलंत समस्याओं पर विचार किया गया। इस अवसर पर पण्डित कैलाशचन्दजी सिद्धान्तशास्त्री की जन्म शताब्दि पर उन्हें श्रद्धांजलि अर्पित की गई तथा डॉ. सुरेशचन्द जैन ने विशेषरूप से उनकी उल्लेखनीय सेवाओं को याद किया।

इस अवसर पर स्व.श्रीमती रूपवती किरण की चर्चित कृति **वसंततिलका** का विमोचन किया गया; जिसका प्रकाशन विद्वत्परिषद् ट्रस्ट द्वारा किया गया है। डॉ. शुद्धात्मप्रभा टडैया की नवीनतम कृति **जैनदर्शनसार** का भी विमोचन किया गया। **– अखिल बंसल**

प्रतिमा स्थापना वर्षगांठ महोत्सव

गजपंथा (महा.) : यहाँ श्री विमलनाथ दिग. जैन मंदिर में दिनांक 1 व 2 मई, 2004 को एक सौ सत्तर तीर्थंकर मण्डल विधान का आयोजन किया गया।

प्रथम दिन प्रात: कलश स्थापना एवं दोपहर में पूजन-विधान का आयोजन हुआ। रात्रि में जिनेन्द्र भक्ति के पश्चात् पण्डित रत्नेशजी शास्त्री अहमदाबाद का बारह भावना विषय पर व्याख्यान हुआ।

द्वितीय दिन प्रात: विधान-पूजन के पश्चात् जिनमंदिर की ध्वजा परिवर्तन का कार्यक्रम रखा गया। दोपहर में पण्डित विरागजी शास्त्री, जबलपुर द्वारा मेरी भावना के आधार पर तथा पण्डित निलेशजी जैन मुम्बई का समयसार पर मार्मिक व्याख्यान हुआ।

विधि-विधान के सम्पूर्ण कार्य पण्डित विरागजी शास्त्री जबलपुर द्वारा सम्पन्न कराये गये।

हार्दिक बधाई

श्री टोडरमल दिग. जैन सिद्धान्त महाविद्यालय, जयपुर के स्नातक सुमतकुमार जैन, बरा का Junior Research Fellowship (कनिष्ठ अनुसंधान अध्येतावृत्ति) में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (UGC) नई दिल्ली द्वारा Selection किया गया है।

ज्ञातव्य है कि आप 'पं. तेजपाल कृत अपभ्रंश पाण्डुलिपि वरांगचरिउ का पाठ-सम्पादन एवं अध्ययन' विषय पर जैन विश्व भारती संस्थान (मान्य विश्वविद्यालय) से शोध कार्य कर रहे हैं।

महाविद्यालय परिवार की ओर से आपको हार्दिक बधाई !

(पृष्ठ – 1 का शेष ....)

ट्रस्ट, जयपुर का लगभग 2 लाख रुपये का सत्साहित्य घर-घर पहुंचा तथा गुरुदेवश्री कानजीस्वामी, युगलजी एवं डॉ. भारिल्ल के प्रवचनों की 1 लाख रुपये की सी.डी. एवं ऑडियो कैसिट्स बिकीं।

आयोजन में पिड़ावा, बिजौलिया आदि 20 संगठनों तथा 35-40 महिला संगठनों का महत्त्वपूर्ण सहयोग रहा। **– कमल बोहरा, अजेय जैन**

श्रुत पंचमी पर्व

भगवान महावीरस्वामी से लेकर आचार्य धरसेन के पूर्व तक आचार्यों के ज्ञान का क्षयोपशम इतना अधिक था कि आगम का अभ्यास मौखिकरूप से ही हुआ करता था, उसे लिपिबद्ध करने की आवश्यकता कभी महसूस ही नहीं की गयी।

भगवान महावीरस्वामी के निर्वाण से 683 वर्ष बाद धरसेनस्वामी नामक एक महान आचार्य हुये, जो द्वादशांग वाणी के एकदेश ज्ञाता थे। वे अष्टांग महानिमित्त ज्ञान के पारगामी और लिपिशास्त्रा के ज्ञाता थे। एक दिन गिरनार की चन्द्रगुफा में बैठे हुये उन्हें ऐसा विकल्प आया कि वर्तमान में ज्ञान के क्षयोपशम में निरन्तर ह्रास हो रहा है, अतः यदि वर्तमान में उपलब्ध श्रुतज्ञान को लिपिबद्ध नहीं किया गया तो यह भी धीरे–धीरे करके विच्छेद हो जायेगा। ऐसा सोचकर धरसेनाचार्य ने नजदीक ही महिमानगरी में हो रहे मुनि सम्मेलन से महासेनाचार्य के दो शिष्यों को बुलाया।

मुनि सम्मेलन से पुष्पदन्त एवं भूतबलि नामक दो मुनिराज धरसेनाचार्य के पास पहुँचे। दोनों मुनिराजों की सामर्थ्य एवं योग्यता की जांच हेतु परीक्षा लेकर उन्हें अत्यन्त मेघावी, कुशाग्रबुद्धि एवं शास्त्रालिपिबद्ध के योग्य जानकर धरसेनाचार्य ने उनको श्रुत का उपदेश दिया तथा अपना उद्देश्य बताकर प्राप्त ज्ञान को लिपिबद्ध करने का आदेश दिया।

आचार्यश्री का आदेश शिरोधार्य मानकर पुष्पदन्त मुनिराज ने णमोकार मंत्रा के रूप में मंगलाचरण कर ग्रन्थ लिखना प्रारम्भ किया। पुष्पदन्ताचार्य ने प्रारम्भ में 'बीसदि' नामक सूत्रों की रचना की और उन सूत्रों को देखकर भूतबलि आचार्य ने द्रव्य प्रमाणानुगम आदि से ग्रन्थ को पूर्ण किया।

ज्येष्ठ शुक्ला पंचमी के दिन ही आचार्य पुष्पदन्त और भूतबलि द्वारा रचित ग्रन्थ की पूर्णता हुई, तभी से यह दिन श्रुतपंचमी के रूप में मनाया जाता है। इस महाआगम के जीवट्ठाण, खुद्दाबंध, बंध स्वामित्व विचय, वेदना, वर्गणा एवं महाबन्ध नामक छह खण्ड होने से इसे षट्खण्डागम के नाम से जाना जाता है।

इस महाग्रन्थ पर आचार्य कुन्दकुन्द की परिकर्म टीका, आचार्य समन्तभद्र कृत टीका, आचार्य शामकुण्ड कृत पद्धति नामक टीका, तम्बूलाचार्य कृत चूड़ामणि नामक टीका एवं आचार्य वप्पदेव कृत व्याख्या प्रज्ञप्ति टीका का नामोल्लेख मिलता है इनमें से वर्तमान में कोई भी टीका उपलब्ध नहीं है। वर्तमान में षट्खण्डागम पर आठवीं शताब्दी में हुये आचार्य वीरसेन द्वारा लिखित धवला नामक महान टीका उपलब्ध है।

ऐसे षट्खण्डागम नामक प्रथम श्रुतस्कंध की पूर्णता का ज्येष्ठ शुक्ला पंचमी का दिन ही श्रुतपंचमी पर्व के रूप में मनाया जाता है।

& l|thodekj xk/kk

स्वास्थ्य चर्चा ....

औषधि के रूप में : पानी

– डॉ. दिनेशचन्द्र जैन

कहा जाता है कि 'जल ही जीवन है'। पानी को यदि विभिन्न प्रकार से प्रयोग किया जाये तो यह औषधि की तरह कार्य करता है।

● प्रातः उठते ही यदि दो–तीन गिलास ताजा पानी पिया जाये तो पेट की कब्ज तो दूर होती ही है; साथ ही अन्य बीमारियाँ भी उत्पन्न नहीं होती।

● हाथ पैरों तथा जोड़ों में दर्द हो रहा हो तो गर्म पानी की पट्टियाँ रखने से विशेष लाभ होता है।

● शरीर में पानी की कमी हो जाने पर तीन चम्मच शक्कर तथा थोड़ा–सा नमक पानी में घोलकर पीने से फायदा होता है।

● कमजोरी महसूस होने पर नमक मिलाकर पानी का सेवन करना लाभप्रद होता है।

● खाँसी हो या जुकाम रोगी को अधिकाधिक जल पीना चाहिए।

● गले में कफ जमा हो या दर्द हो रहा हो, नमक मिले पानी से गरारे (गले में पानी को ऊपर नीचे) करने से लाभ प्राप्त होता है।

● स्वस्थ व्यक्ति को भी दिन में 8 से 10 गिलास पानी पीना चाहिए। इससे शरीर स्वस्थ रहता है तथा सौंदर्य में वृद्धि होती है।

● प्रतिदिन भोजन के बाद एक कप गरम पानी धीरे–धीरे चाय की तरह पीने से मोटापा घटता है।

सावधान ! आप क्या खा रहे हैं ?

● **चाँदी का वर्क** : क्या आप जानते हैं कि जिन वर्क लगी मिठाइयों या सुपारियों को आप बड़े शौक से खा रहे हैं, उनके सेवन में मांसभक्षण हो रहा है। क्या आपको मालूम है कि वर्क कैसे बनाया जाता है?

बैल की आँतों के टुकड़ों को एक के ऊपर एक रखकर उनके बीच में चाँदी या सोने का टुकड़ा रखा जाता है और हथौड़े से मार की जाती है, जिससे चाँदी/सोना धीरे–धीरे वर्क का रूप धारण कर लेता है। हथौड़े मारने से आँत का कुछ अंश वर्क में मिल जाता है।

● **चाऊमीन** : आजकल दावत और पार्टियों में चाऊमीन बड़ी ही प्रमुखता से तैयार कराई जाती है। खासतौर से बच्चे चाऊमीन के शौकीन अधिक हैं, लेकिन नवीन जानकारी के अनुसार चाऊमीन के निर्माण में अण्डे का पीला भाग प्रयुक्त किया जाता है; अतः चाऊमीन मांसाहार है।

अत: उक्त वस्तुओं के सेवन से बचने का प्रयास किया जाना चाहिये।

नि:शुल्क मंगावें

अखिल विश्व जैन मिशन की ओर से अहिंसा व शाकाहार के सम्बन्ध में काफी साहित्य एवं प्रचार सामग्री का प्रकाशन किया गया है। प्राप्ति के इच्छुक महानुभावों से निवेदन है कि वे डॉ. ताराचन्द बख्शी, प्र.मंत्री, अखिल विश्व जैन मिशन, बख्शी भवन, न्यू कॉलोनी, जयपुर के पते से 5/–रुपये का डाक टिकिट भेजकर नि:शुल्क मंगा लें।

तत्त्वचर्चा

प्रवचनसार का सार 7

– डॉ॰ हुकमचन्द भारिल्ल

आचार्यदेव २८ वीं व २९ वीं गाथा में कहते हैं कि जिसप्रकार चक्षु रूप को जानती है, उसीप्रकार ज्ञान ज्ञेयों को जानते हैं और ज्ञेय ज्ञान में जाने जाते हैं।

जब हम किसी चीज का रस चखते हैं तो पदार्थ को हमारे जिव्हा तक आना पड़ता है अथवा हमारी जिव्हा को उस पदार्थ तक जाना पड़ता है; अन्यथा रस नहीं चखा जा सकता।

किसी पदार्थ की गंध को हमें जानना है तो उस गंध को हमारे नाक में आकर टकराना होगा अथवा हमारीं नाक को उस गंध तक जाना होगा। अन्यथा हम उस गंध को नहीं जान सकते हैं।

यदि हमें शब्द सुनना हो तो उन शब्दों को हमारे कान से टकराना होगा, अन्यथा हमारे कान को वहाँ जाकर लगना पड़ेगा। अन्यथा हम उन शब्दों को नहीं सुन सकते हैं।

यदि हम किसी वस्तु को सूँघने अर्थात् गंध का ज्ञान करने जाय और उस वस्तु से हमें एलर्जी हो तो हमें जुखाम हो सकता है, अगर जोर से शब्द हमारे कानों पर पड़े तो हमारे कान का पर्दा भी फट सकता है, हम मिर्ची का स्वाद चखने जाए तो हमारी जिव्हा भी जल सकती है; क्योंकि हमें वहाँ जाकर उसका स्पर्श करना पड़ता है।

इतनी सारी समस्यायें देखकर सामनेवाला यह कह सकता है कि हमें ऐसा जाननेवाला संबंध नहीं चाहिए।

तब आचार्य कहते हैं कि यह संबंध नेत्रेन्द्रिय जैसा है। **जैसे नेत्र अग्नि को देखें तो जलते नहीं हैं, बर्फ को देखें तो ठण्डे नहीं होते। जिसप्रकार आँख दूर रहकर जानती है; अत: अप्राप्यकारी है अर्थात् उस पदार्थ को प्राप्त नहीं होती है, उन पदार्थों के पास नहीं जाती है, ज्ञान का स्वभाव भी ऐसा ही है।**

जिस जीव ने ज्ञान के स्वभाव को नहीं पहचाना और इन्द्रियज्ञान को ही ज्ञान मान लिया तो वह जीव जानने से ही घबराने लगता है।

आचार्य कहते हैं कि ज्ञान का स्वभाव चक्षु इन्द्रिय जैसा है; रसना, घ्राण अथवा स्पर्शन इन्द्रिय जैसा नहीं है।

लोग कहते हैं कि ह्न ''भाईसाहब ! मैंने एक किताब लिखी है, आप जरा इस पर एक निगाह डाल लो।''

तब मैं कहता हूँ ''मेरे पास समय नहीं है।''

क्योंकि मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि मेरे दो घंटे व्यर्थ हो जाएँगे; यह पहले तो निगाह डालने के लिए कहेगा; इसके बाद कहेगा कि कहीं गड़बड़ी हो तो ठीक कर देना और यदि ठीक है तो ठीक है ह्न यह लिखकर दे देना। यदि उसे गड़बड़ी बताएँगे तो बहस करेगा, समय व्यर्थ करेगा।

यदि तंग आकर हम ''ठीक है'' ह्न ऐसा कह देते हैं तो 'लिख के दो' ह्न ऐसा कहता है। वह कहता है कि – 'इसमें मैं दो शब्द छाप देता हूँ कि आपने इसे अच्छी तरह देख लिया है और यह बिल्कुल सही है।'

जो इसकी गल्तियाँ है; उन्हें वह हमारे ही माथे अनन्तकाल तक के लिए मढ़ना चाहता है। वह सिर्फ दिखाने के लिए नहीं दिखाना चाहता है।

यह कहता है कि जरा–सा देख लीजिए ! भाई ! यह जरा–सा देखना नहीं है; बहुत तकलीफ का काम है।

अरे भाई ! जानने में तकलीफ नहीं है; जो तकलीफ हुई है, वह राग–द्वेष के कारण हुई है। सहजभाव से जानने में आ जाए तो कोई समस्या नहीं है।

इसलिए आचार्य कहते हैं कि जैसे चक्षु रूप को जानती है; वैसे ही तुम जानो; घबराओ नहीं। अगली गाथा में आचार्य स्पष्ट करते हैं ह्न

ण पविट्ठो णाविट्ठो णाणी णेयेसु रूवमिव चक्खू।
जाणदि पस्सदि णियदं अक्खातीदो जगमसेसं।।२९।।

न तो ज्ञान ज्ञेय में प्रविष्ट होता है और न ही ज्ञेय ज्ञान में। ज्ञेय ज्ञेय में रहते हैं और ज्ञान ज्ञान में रहता है। ज्ञान के जानने से ज्ञेय में कोई बाधा उत्पन्न नहीं होती है और ज्ञेय ज्ञान में जाने जाते हैं तो ज्ञान में कोई बाधा उत्पन्न नहीं होती है।

जैसे किसी ने गाली दी। उस गाली का ज्ञान मुझे हुआ; उससे मुझे कोई बाधा उत्पन्न नहीं हुई। यदि कोई बाधा उत्पन्न होती है तो वह ज्ञानस्वभाव नहीं है। यह जानने का दोष नहीं है, यह कोई दूसरा ही दोष है। मुझमें जो राग–द्वेष हैं, उनके कारण मुझे बाधा उत्पन्न हुई है न कि ज्ञान के कारण।

केवली भगवान में तो राग–द्वेष हैं नहीं; इसलिए उन्हें कोई बाधा होनेवाली नहीं है। उन्हें कोई गालियाँ सुनाए तो भी कुछ बाधा नहीं होनेवाली है; क्योंकि वह स्थिति सहजभाव से उनके ज्ञान का ज्ञेय बनकर रह जाएगी। उनकी कितनी ही प्रशंसा करो, कितनी ही भक्ति करो, यह स्थिति भी सहज भाव से उनके ज्ञान का ज्ञेय बनकर रह जाएगी।

ऐसा वस्तुस्वरूप हमारे हित में ही है; क्योंकि भगवान की हमने जितनी स्तुति के रूप में प्रशंसा की है; अगर उससे वे प्रसन्न या नाराज हो गए तो..।

यहाँ नाराज होने के ही अवसर अधिक हैं, प्रसन्न होने का तो प्रश्न ही उपस्थित नहीं होता; क्योंकि हमने उनके ऊपर बहुत झूठे आरोप लगाए हैं। 'द्रोपदी को चीर बढ़ायो' 'सीता प्रति कमल रचायो' 'अंजन से किए अकामी, अब मेरी भी बार अबार कर रहे हो।' 'गाय का दूध दुह लिया, नीचे से छुपे–छुपे।' 'महावीर तूने भूत भगा दिए।'ह्न ऐसे न जाने कितने ही आरोप हमने उन पर लगाये हैं। हमने उनकी सही रूप में स्तुति की ही नहीं। अत: उनके प्रसन्न होने का प्रश्न ही नहीं होता; क्योंकि जैसा वे कभी करते नहीं; ऐसी कितनी ही कर्तृत्व की बातें हमने उन पर थोपी हैं। उन पर हमने कर्तृत्व के आरोप लगाए हैं; जबकि वे जानने के अलावा कुछ ही नहीं करते। अच्छा है कि वे इन आरोपों से नाराज नहीं होते और झूठी प्रशंसा से खुश नहीं होते; सच्ची प्रशंसा से भी वे खुश नहीं होते।

इन्द्रियज्ञान के साथ में राग–द्वेष अनिवार्य है। वह राग–द्वेष ज्ञान में आए ज्ञेयों से होता है। अतीन्द्रियज्ञानवालों में राग–द्वेष नहीं है; इसलिए वे पूर्णत: निर्दोष है। संपूर्ण लोकालोक अतीन्द्रियज्ञान में झलकें तो भी उसमें कोई प्रवेश करनेवाला नहीं है। ज्ञान और ज्ञेय दोनों अपनी–अपनी जगह ही रहते हैं।

१९६१–६२ में जब मेरा अपेन्डिक्स का ऑपरेशन हुआ था, तब भोपाल के झरने के मंदिर में बैठकर मैंने ज्ञानस्वभाव के बारे में एक दोहा लिखा था। उसकी भाषा तो अच्छी नहीं है; लेकिन भाव बहुत बढ़िया हैह्न

ज्ञान न ज्ञेयों में घुसे, ज्ञेय न ज्ञान के मांहि।
कमल विकासी सूर्य है सूर्य कमल तो नांहि।।

ज्ञान ज्ञेयों में प्रवेश नहीं करता है और ज्ञेय ज्ञान में प्रवेश नहीं करते हैं। सूर्य से कमल खिलता है; पर सूर्य कमल तो नहीं हो जाता।

यहाँ तो यह कहा जा रहा है कि ज्ञान और ज्ञेय सूर्य और कमल के समान परस्पर इतने दूर हैं कि कोई किसी का कुछ कर ही नहीं सकता है। सूर्य ने कमल में कुछ नहीं किया और कमल ने सूर्य में कुछ नहीं किया। यह तो सब सहज निमित्त-नैमित्तिक सम्बन्ध है कि सूर्य उगता है तो कमल खिल जाता है। ज्ञान ने संपूर्ण लोकालोक को सहजभाव से जान लिया है और संपूर्ण लोकालोक ज्ञान में सहजभाव से झलक गया है।

आचार्यदेव ने गाथा के माध्यम से कहा ही है कि जैसे चक्षु रूप को देखती है; उसीप्रकार आत्मा इन्द्रियातीत होता हुआ ज्ञेयों में न अप्रविष्ट होकर और न ही प्रविष्ट रहकर अशेष जगत को जानता-देखता है। जानना-देखना आत्मा का स्वभाव है, स्व-परप्रकाशकत्व यह एक आत्मा की शक्ति है।

यहाँ एक प्रश्न है कि आत्मा में जो ज्ञानगुण है, वह निश्चय से है या व्यवहार से है ?

ज्ञान आत्मा का स्वभाव है। जब आत्मा और ज्ञान ह्न ऐसा भेद करते हैं, तब उस भेद को व्यवहार कहते हैं। ज्ञानगुण व्यवहार से नहीं है, हमने ज्ञान और आत्मा में जो भेद किया है, वह व्यवहार से है। जिसप्रकार ज्ञान नामक गुण है; वह निश्चय से है; उसीप्रकार स्वपरप्रकाशकत्व शक्ति भी एक गुण है; अत: वह भी निश्चय से है। यदि स्वपरप्रकाशकत्व शक्ति और आत्मा ह्न ऐसा भेद करेंगे तो वह व्यवहार कहलायेगा।

पर को जानने का निषेध करने पर मात्र पर को ही जानने का निषेध नहीं होगा, अपितु स्व को जानने का भी निषेध हो जायेगा; क्योंकि यहाँ जानने का ही निषेध हो गया।

ज्ञान में संपूर्ण लोकालोक झलकते हैं। यह ज्ञान का स्वभाव है, विभाव नहीं, विकार नहीं। स्वपरप्रकाशक ज्ञान का स्वभाव है। ज्ञान का स्वभाव जानने से 'हमारा ज्ञान पर को जानने से विकृत हो जायेगा' ह्न ऐसा भय निकल जाता है।

किसी न किसी के द्वारा जाना जाय ह्न यह ज्ञेय का स्वभाव है; हर ज्ञेयपदार्थ प्रतिसमय अनंत सिद्ध भगवन्तों के ज्ञान का ज्ञेय बन रहा है।

यहाँ यह प्रश्न हो सकता है कि यदि ज्ञेयपदार्थ सबके ज्ञान के ज्ञेय बनते हैं तो यहाँ 'किसी न किसी' ह्न ऐसा क्यों लिखा ?

हम यह न कहने लग जाए कि अमुक पदार्थ मेरे ज्ञान का ज्ञेय तो नहीं बना, मुझे तो नहीं दिखा। इसलिए यहाँ लिख दिया कि 'किसी न किसी के' ज्ञान का विषय बनता है; परन्तु **ज्ञेयत्वस्वभाव में ऐसी कोई शर्त नहीं है कि वह किसी न किसी के ज्ञान का विषय बने। उसकी तो यह शर्त है कि वह सबके ज्ञान का ज्ञेय बने; परन्तु किसी के ज्ञान में कमजोरी हो तो यह सम्भव नहीं है।**

दर्पण का यह स्वभाव है कि जो उसके सामने आए, उसमें वह झलके; परन्तु दर्पण मैला हो, उस पर कपड़ा पड़ा हो तो यह दर्पण का दोष है। उस ज्ञेय ने कहाँ प्रतिबंध लगाया कि तुम मुझे नहीं जानो।

जगत के जो ज्ञेय हैं, वे स्वयं परिणमन कर रहे हैं। ज्ञान के जानने से उनमें पराधीनता नहीं आती है और ज्ञान नहीं जाने तो वे पराधीन हो गए ह्न ऐसा भी नहीं है। सम्यग्दृष्टि को अगुप्तिभय नहीं होता है; क्योंकि उसके गुप्त नाम की कोई चीज ही नहीं है, कोई पदार्थ छिपा हुआ है ही नहीं।

नैतिक व्यवहार के लिए भी जैनेतरों में यह कहा जाता है कि भगवान सब जगह हैं, वे सबको देखते हैं; पाप करोगे तो छुपकर नहीं कर सकते हो।

एक बार मास्टरजी ने सभी बच्चों को मिट्टी की चिड़िया बना कर दी और कहा कि जहाँ कोई नहीं देखे ह्न ऐसी जगह जाकर उसकी गर्दन तोड़के लाओ। सब लड़के गुरुजी से दूर जाकर उसकी गर्दन तोड़ लाए; परन्तु एक बालक ऐसा न कर सका। उसने कहा, गुरुजी ! मैंने बहुत कोशिश की; लेकिन मैं असफल रहा; क्योंकि ऐसी कोई जगह नहीं है; जहाँ भगवान नहीं देख रहा हो। अत: अगर कोई पाप करते हुए यह सोचे कि कोई नहीं देख रहा है तो यह गलत है; क्योंकि भगवान सब देख रहे हैं।

इसप्रकार जैनेतर समाज में नैतिकता का प्रचार किया जाता है। अगर इतनी बात से नैतिकता आ जाती है तो जैनों में भी आ जानी चाहिए; क्योंकि अजैनों के यहाँ तो केवल एक भगवान देखते हैं; लेकिन जैनियों के यहाँ तो अनंते भगवान देखते हैं। आत्मा का स्वभाव देखना-जानना है, सबको जानना-देखना है। कोई बात छुपी रहने का स्वभाव ही नहीं है। कहीं कोई छुपाने का उपाय ही नहीं है; इसलिए छिपाने जैसा काम करना ही क्यों ?

मेरा यह सिद्धान्त है कि जो किसी से नहीं कहना है, वह कहो ही मत। आप किसी से कहेंगे, फिर वह भी किसी से कहेगा। वह उससे कहते हुए साथ में यह भी कहेगा कि 'तुम किसी से कहना नहीं।' ह्न ऐसे कहते-कहते वह वार्त्ता सारे जगत में फैल जाएगी।

तथा साथ में यह भी होता जाएगा कि तुम किसी से कहना नहीं और यदि तुमने ऐसा कहकर उस बात को और आगे बढ़ा दिया तो वह भी ऐसे ही बढ़ाएगा। इसलिए ऐसा कहना ही नहीं। गुप्त नामकी कोई चीज रखना ही नहीं। जो कहो, वह यही मानकर कहना कि यह सारे जगत में पहुँच जाएगी। कम से कम जिसके बारे में कहा जा रहा है; उस तक तो पहुँच ही जाएगी।

दूसरों पर ऐसा दोषारोपण कभी मत करना कि ह्न 'आप इस बात को पचा नहीं सके।' यदि तुम स्वयं ही इस बात को गुप्त नहीं रख सके तो जगत में और कौन इस बात को गुप्त रखेगा ?

मैं प्रतिवर्ष अमेरिका जाता हूँ। वहाँ उनसे कहता हूँ कि ह्न 'आप हिन्दुस्तान में पैदा हुए, हिन्दुस्तान में ही पढ़े, २५ वर्ष तक हिन्दुस्तान में रहे, हिन्दुस्तान में ही विवाह हुआ, सन्तान हुई। उसके बाद आप अमेरिका आए हो। यदि आप ही स्वयं अपनी संस्कृति को सुरक्षित नहीं रख पाए, अपने धार्मिक संस्कार जीवित नहीं रख पाए तो आपकी अगली पीढ़ी, जो यहाँ ही पैदा हो रही है; उनसे धार्मिक संस्कार जीवित रहेंगे' ह्न ऐसी अपेक्षा करना व्यर्थ ही है।

अरे ! तुमने इस जैनतत्त्वज्ञान को समझा है; पाँच साल, दस साल अध्ययन किया है। यदि तुम ही इसे जीवित नहीं रखोगे तो कौन रखेगा ? दूसरे तो जैनधर्म के संबंध में शून्य हैं, उनसे क्या अपेक्षा करोगे ?

वह कहता है कि मैंने तो अकेले इनसे कहा था और इन्होंने दस लोगों से कह दिया। इन्होंने बहुत बड़ी गलती की।

अरे भाई ! गलती यदि किसी ने आरंभ की तो वह तुमने ही आरंभ की है। भाई, एक दाना बो दो तो दश दाने पैदा होते ही हैं, उसमें क्या है ? वह एक गेहूँ का दाना तुमने ही बोया है। **(क्रमश:)**

रजिस्ट्रेशन आर. एन. आई. 31109/77

38 वें शिक्षण-प्रशिक्षण शिविर का उद्घाटन

देवलाली (महा.) : पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट जयपुर द्वारा संचालित एवं पूज्य श्री कानजीस्वामी स्मारक ट्रस्ट देवलाली द्वारा आयोजित 9 से 26 मई, 2004 तक अठारह दिन चलनेवाले 38 वें श्री वीतराग-विज्ञान आध्यात्मिक शिक्षण-प्रशिक्षण शिविर का उद्घाटन समारोह रविवार, दिनांक 9 मई, 2004 को पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल की अध्यक्षता में श्री बलुभाई चुन्नीलाल शाह मुम्बई के करकमलों से सानन्द सम्पन्न हुआ। मुख्यअतिथि श्री जयन्तीभाई डी. दोसी दादर-मुम्बई एवं विशिष्ट अतिथि श्री नितिनकुमार ताराचन्दजी शाह मुम्बई, श्री पूनमचन्दजी लुहाड़िया अजमेर, श्री आर.के. जैन इन्जीनीयर इन्दौर एवं श्री सवाईलाल अमूलकचन्द सेठ मुम्बई आदि भी मंचासीन थे।

उद्घाटन से पूर्व प्रात:काल श्री ताराचन्द माणकचन्दजी शाह परिवार, मुम्बई ने झण्डारोहण किया।

उद्घाटन समारोह में श्रीमान मुकुन्दभाई खारा ने आगन्तुक विद्वद्गण एवं अतिथियों का स्वागत करते हुये पूज्य श्री कानजीस्वामी स्मारक ट्रस्ट का परिचय दिया। यह शिविर देवलाली में पाँचवी बार लगाने की स्वीकृति प्रदान करने के लिये पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट का आभार व्यक्त किया। शिविर का महत्त्व बताते हुए उन्होंने इसे तत्त्वज्ञान के प्रचार-प्रसार के लिये पंचकल्याणक से भी अधिक महत्त्वपूर्ण बताया।

पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट के ट्रस्टी एवं प्रकाशन मंत्री ब्र. यशपालजी जैन ने ट्रस्ट द्वारा संचालित गतिविधियों का परिचय देते हुये दक्षिण भारत में भी पूज्य कानजीस्वामी द्वारा प्रचारित तत्त्वज्ञान के प्रचार-प्रसार की भरपूर संभावना बताई एवं यह जानकारी भी दी कि इस शिविर में शताधिक शिविरार्थी तो अकेले एक कोल्हापुर जिले से ही पधारे हुये हैं।

अपने अध्यक्षीय भाषण में पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल ने शिविरों के मूल प्रेरणास्रोत पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के योगदान का स्मरण कराते हुये शिविर का परिचय एवं उपयोगिता पर प्रकाश डाला।

इसी अवसर पर डॉ. शुद्धात्मप्रभा टडैया द्वारा विशेषकर बालकों के लिये लिखी हुई 'जैन के.जी. भाग-1' का विमोचन पण्डित कोमलचन्दजी जैन टडावालों ने एवं 'जैन नर्सरी (गुजराती)' का विमोचन पण्डित कमलचन्दजी जैन पिड़ावावालों ने किया।

उपर्युक्त अतिथि एवं विद्वानों के साथ ब्र. हेमचन्दजी 'हेम' भोपाल, पण्डित दिनेशभाई शाह मुम्बई, पण्डित नरेन्द्रकुमारजी जबलपुर, पण्डित आलोककुमारजी शास्त्री कारंजा, पण्डित संजयकुमारजी राऊत कचनेर, पण्डित धर्मेन्द्रकुमारजी शास्त्री जयपुर, डॉ. राजेन्द्रकुमारजी बंसल अमलाई, डॉ. उज्ज्वलाबेन शहा मुम्बई, श्रीमती कमलाबाई भारिल्ल जयपुर, श्रीमती रंजना बंसल अमलाई, श्रीमती राजकुमारी बेन जयपुर, श्रीमती जयश्री जैन इन्दौर आदि विद्वान व अध्यापकगण भी मंचासीन थे।

सभा का संचालन पण्डित शांतिकुमारजी पाटील ने किया।

शिविर के विस्तृत समाचार आगामी अंक में प्रकाशित किये जायेंगे।

स्वाध्याय भवन का उद्घाटन एवं वेदी शिलान्यास

कोलकाता : श्री कुन्दकुन्द कहान दि. जैन स्वाध्याय मंदिर ट्रस्ट द्वारा आयोजित एवं श्री दि. जैन मुमुक्षु मण्डल कोलकाला द्वारा संचालित श्री कुन्दकुन्द स्वाध्याय भवन का उद्घाटन समारोह एवं वेदी शिलान्यास का आयोजन दिनांक 25 अप्रैल को सानन्द सम्पन्न हुआ।

इस अवसर पर सम्मेदशिखर मण्डल विधान का आयोजन हुआ।

विधि-विधान के सम्पूर्ण कार्य ब्र.जतीशचन्दजी शास्त्री, सनावद के निर्देशन में पण्डित अशोकजी रायपुर, पण्डित अभिनयजी जबलपुर एवं पण्डित दीपकजी भोपाल द्वारा सम्पन्न कराये गये। इस अवसर पर पण्डित अनिलजी भिण्ड के प्रवचनों का लाभ प्राप्त हुआ।

स्वाध्याय भवन के उद्घाटन कर्त्ता श्री सौभागमलजी, टीकमचन्दजी, बाबूलालजी, अरविन्दकुमारजी पाटनी परिवार तथा वेदी शिलान्यासकर्त्ता श्री मनोहरलालजी, अरविन्दकुमारजी एवं काला परिवार थे। विधान श्री महावीरप्रसादजी अशोकजी चौधरी परिवार द्वारा कराया गया।

(आगामी कार्यक्रम ...)

विशाल धार्मिक शिविर का आयोजन

समस्त साधर्मी बन्धुओं को यह जानकर प्रसन्नता होगी कि अमरकंटक की तलहटी में बसे कटनी, उमरिया, शहडोल एवं अनुपपुर जिलों के 27 स्थानों पर ग्रुप शिविर का आयोजन किया जा रहा है।

भगवान महावीर से चले आ रहे तत्त्वज्ञान को नई पीढ़ी तक पहुँचाने तथा बच्चों में धार्मिक एवं नैतिक संस्कार डालने के उद्देश्य से अहिंसा संस्कार समिति, शहडोल द्वारा दिनांक 15 से 22 जून, 2004 तक विशाल धार्मिक शिक्षण-शिविर का आयोजन किया है; जिसमें जैनधर्म के मर्मज्ञ 80 युवा विद्वानों द्वारा वैज्ञानिक पद्धति से बच्चों को शिक्षित किया जायेगा।

शिविर में बालकों एवं विशिष्ट व्यक्तियो को प्रमाण-पत्र एवं पुरस्कार प्रदान किये जायेंगे। ऐसा अद्भुत कार्य इस क्षेत्र में पहली बार हो रहा है; अत: समस्त साधर्मियों से अधिकाधिक धर्मलाभ लेने हेतु हमारा भावभीना निवेदन है। **– अभिषेक एवं पंकज शास्त्री**

जैनपथप्रदर्शक (पाक्षिक) मई (द्वितीय) 2004

J. P.C. 3779/02/2003-05

प्रति,

सम्पादक : **पण्डित रतनचन्द भारिल्ल** शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, एम.ए., बी.एड.
प्रबन्ध सम्पादक : **पण्डित संजीवकुमार गोधा,** डबल एम.ए.जैनविद्या व तुलनात्मक धर्मदर्शन तथा इतिहास ❊ **पं. जितेन्द्र वि.राठी शास्त्री**
प्रकाशक एवं मुद्रक : **ब्र. यशपाल जैन** द्वारा जैनपथप्रदर्शक समिति के लिए जयपुर प्रिण्टर्स प्रा.लि., एम. आई. रोड, जयपुर से मुद्रित तथा त्रिमूर्ति कम्प्यूटर्स, ए-4, बापूनगर, जयपुर से प्रकाशित।

यदि न पहुँचे तो कृपया निम्न पते पर भेजें –
ए- 4 बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)
फोन : (0141) 2705581, 2707458
तार : त्रिमूर्ति, जयपुर **फैक्स :** 2704127